मजदूरों का अपना कोई देश नहीं होता ।

दुनियां के मजदूरो, एक हो !

फरीदाबाद मजदूर समाचार

मजदूरों की मुक्ति खुद मजदूरों का काम है ।

दुनियां को बदलने के लिए मजदूरों को खुद को बदलना होगा ।

RN 42233 पोस्टल रजिस्ट्रेशन L/HR/FBD/73

नई सीरीज नम्बर 34 | अप्रेल 1991 | 50 पैसे

पूंजीवादी विकल्प ·· मजदूर विकल्प

नवम्बर 89 में यह नजर आने लगा था कि पूंजीवादी शासन का चालीस साल से यहां चला आ रहा पूंजीवादी जनतन्त्र वाला स्वरूप अब कारगर नहीं रहा था । ससदीय राजनीति के नाटक से नौटंकी बन जाने की स्थिति ने पूंजीवादी शासन के लिये उसकी उपयोगिता को क्षीण कर दिया था । सब संसदीय पार्टियों-हरेक पार्टी के धड़ों-प्रत्येक लीडर के स्वय लोकप्रिय होने और दूसरों को टगड़ी मारने की भागमभाग के इस डेढ साल ने इसे दिन के उजाले की तरह स्पष्ट कर दिया है । इसलिए ससदीय चुनाव की भगदड़ में शामिल लोगों में भी संसदीय प्रणाली के स्थान पर राष्ट्रपति प्रणाली की उपयोगिता का सुर गूंजने लगा है ·····

पूंजीवादी ताने-बाने को बनाये रखने में अहम रोल अदा करने वाले आई ए एस—आई पी एस—सम्पादक-प्रोफेसर लोगों ने देश की एकता-अखंडता बनाम ससदीय चुनाव के तौर पर सवाल को प्रस्तुत करना शुरू कर दिया है । साहब लोगों ने फतवे देने शुरू कर दिए हैं कि पूंजीवादी जनतन्त्र के बने रहने के लिए ससदीय चुनाव जरूरी शर्त नहीं है । वे कह रहे हैं कि ससदीय चुनाओं से देश की एकता खतरे में पड़ती हो तो पूंजीवादी जनतन्त्र के बने रहने के लिये पचायतों और लोकल बोडीज के चुनाव करवा लेना पर्याप्त है । साहब लोग दो टूक कह रहे हैं : "देश को तोड़ने के लिये ससदीय चुनाव को इस्तेमाल करने की इजाजत नहीं दी जा सकती !"—पूंजीवादी गिरोहों के आपसी मसलों/झगड़ों में भी यह अब यहां साफ-साफ कहा जाने लगा है । जाहिर है कि सब पूंजीवादी गिरोहों के खिलाफ, स्वय पूंजीवादी व्यवस्था के खिलाफ क्रान्तिकारी विकल्प के लिये संसदीय राजनीति को उपयोगी समझने वालों को मामले पर पुन: विचार करना चाहिये । वैसे पजाब-कश्मीर-असम के मामलों में "चुनाव स्वतन्त्र होने चाहिये" आदि की आड़ में कांग्रेसी-जनसंघी-नकली कम्युनिस्ट भी साहब लोगों की बोली बोल रहे हैं ·····

असल में मामला पूंजीवादी जनतन्त्र के तहत संसदीय अथवा राष्ट्रपति प्रणाली का नहीं है । पूंजीवादी राजनीतिज्ञों की बजाय साहब लोग इस मामले में हकीकत के अधिक नजदीक हैं । पूंजीवादी व्यवस्था के गहराते संकट और पूंजी के भारतीय धड़े की कमजोरी ने आज वहां पूंजीवादी जनतन्त्र के स्थान पर पूंजीवादी एकतन्त्र की स्थापना को पूंजीवादी शासन के लिए जरूरी बना दिया है । फिलहाल पूंजीवादी जनतन्त्र को बोरे में बन्द करना पूंजी के नुमाइन्दों के लिये यहां आवश्यक हो गया है । इस प्रकार **आज यहां वास्तव में पूंजीवादी विकल्प यह है : पूंजीवादी जनतन्त्र का इस्तेमाल करते हुए हिन्दुस्तानी हिटलर का सत्ता में आना अथवा किसी फौजी हिटलर द्वारा जारी नौटंकी को धत्ता बताकर तन्त्र की बागडोर हाथ में लेना । पूंजीवादी एकतन्त्र हमारे सामने मुंह बाये खड़ा है** ·······

यह सही है कि अब पूंजीवादी जनतन्त्र - बनतन्त्र के भेद क्रान्तिकारी मजदूर आन्दोलन के विकास के लिए कोई खास महत्व के नहीं हैं । पर यह भी सही है कि अपनी व्यवस्था के गहराते सकट के बोझे को अधिकाधिक मजदूरों पर थोपने के लिए ही पूंजी के नुमाइन्दों के लिए यहाँ पूंजीवादी जनतन्त्र के स्थान पर पूंजीवादी एकतन्त्र की स्थापना एक आवश्यकता बन गई है । पूंजीवादी जनतन्त्र में बराये नाम की बराबरी तथा स्वतन्त्रता के ढकोसले के तहत मजदूरों की बदहाली और पूंजीवादी एकतन्त्र की मडरा रही दमन की रात का माहौल — आइए मजदूर विकल्प, क्रान्तिकारी विकल्प पर विचार करें ।

इस सम्बन्ध में पहली बात यह है कि **पूंजीवादी जनतन्त्र हो चाहे पूंजीवादी एकतन्त्र, क्रान्तिकारी विकल्प है मजदूर जनतन्त्र । दोहरा दें, पूंजीवादी जनतन्त्र का क्रान्तिकारी विकल्प जनतन्त्र का खात्मा नहीं बल्कि मजदूर जनतन्त्र की स्थापना है ।** और 60-70 साल से हालात ऐसी बनी है कि आज सर्व प्रथम इस बात को ही स्पष्ट करना जरूरी हो गया है ।

डेढ सौ साल से, अपने आरम्भ से ही मजदूर आन्दोलन में कम्युनिस्ट हस्तक्षेप का लक्ष्य मजदूर जनतन्त्र की स्थापना की राह साम्यवादी समाज का निर्माण रहा है । पूंजीवादी जनतन्त्र की बराये नाम की बराबरी, सतही क्षमता की जगह मजदूर जनतन्त्र में वास्तविक बराबरी होती है ।

(शेष अगले पेज पर)

बिचौलिया संस्कृति

प्लाईकास्ट वाई एम सी ए के पास सैक्टर 11 में एक छोटी फ़ैक्ट्री है 15 मार्च को इस फैक्ट्री में भी मैनेजमेन्ट के टुकड़ों के लिए बिचौलिए बनने की होड़ में घिनौनी हरकतें सामने आई लीडरी की लड़ाई में फैक्ट्री घड़ी की चोरी को मामला बना कर नए और पुराने यूनियन लीडरों ने मजदूरों में गुटबन्दी की और प्लाईकास्ट मैनेजमेन्ट को पच बनाया ।

फरीदाबाद की फैक्ट्रियों में यह आम तौर पर देखने में आ रहा है कि फैक्ट्री बड़ी हो चाहे छोटी, यूनियन लीडर/मजदूर लीडर के नाम पर वहाँ वास्तव में बिचौलिए होते हैं । भारत मे सामाजिक जीवन में छाई बिचौलिया संस्कृति ने यहां फैक्ट्रियों में भी रग जमा रखा है । मैनेजमेन्टें बिचौलियों को पैदा करती व पालती–पोसती हैं । पचास सौ वर्कर वाली फैक्ट्री में भी लीडर काम नहीं करते, फैक्ट्री में उनका आना–जाना भी मनमर्जी सा होता है । मजदूरों के छुट्टी—एडवाँस जैसे छोटे–छोटे निजी काम करवा कर यह लोग मजदूरों के सामुहिक हितों पर चोट करने में सहायक बन कर मैनेजमेंटों को लाभ पहुचाते हैं । इसके एवज में इन यूनियन लीडरों-मजदूर लीडरों-बिचौलियों को आवारागर्दी की छूट के साथ—साथ मैनेजमेंटें उन्हें उनकी औकात के हिसाब से हलवा-पूरी भी देती हैं । फरीदाबाद के प्रमुख बिचौलिए को कोठी कार तो दे ही रखे हैं, उसे राजनीतिक लीडर बनाने के लिए भी एक मैनेजमेंट काफी खर्च कर रही है

मिठाई-बर्तन-कपड़ा-कम्बल खरीदने में कमीशन, मजदूरों के वेलफेयर फन्ड की लूट, मजदूरों से चन्दा (कई बड़ी फैक्ट्रियों में मजदूरों की तनखा से पैसे काट कर मैनेजमेन्टें चैक बना कर बिचौलियों को देती हैं) और मैनेजमेंटों की महत्वपूर्ण पालिसियाँ लागू करवाने के लिए मिलने वाले पैसों से यहां बिचौलियों को मकान–दुकान–वर्कशाप खड़ी करने, प्रोपर्टी डीलरी करते देखा जा सकता है । यह ऐसी मौज-मस्ती के लिये ही है कि यूनियन लीडरों के चुनावों में यहां पैसा-मुर्गा-बोतल-जाति-इलाका प्रमुख मुद्दे बने हुए हैं ।

दिक्कत यह है कि जिन फैक्ट्रियों में मजदूर नये सिरे से संगठित होने की कोशिश करते हैं और बेहतरीन मजदूर बहादुरी से खतरे उठाते हुए मैनेजमेन्टों का मुकाबला करते हैं, वहां भी सफल होने पर आमतौर पर बेहतरीन मजदूर ही नये बिचौलिये बन जाते हैं ।

आइये बीमारी की जड़ को समझने की कोशिश करें और संगठन व संघर्ष के नये स्वरूप तलाश करके मजदूर क्षेत्र से बिचौलिया संस्कृति को दफनाना शुरू करें ।

—o—

डी एल एफ इन्डस्ट्रियल एरिया के मजदूर कहते हैं कि इस एरिया की अधिकतर फैक्ट्रियों में अब भी 540 रुपये वेतन मिलता है और वह भी 20 तारीख के बाद । ई एस आई, प्रोविडेन्ट फन्ड, बोनस आमतौर पर लापता रहते हैं । साप्ताहिक छुट्टी नदारद है । ठेकेदारी प्रथा का डी एल एफ एरिया में बोलबाला है । चार-पाँच साल से काम करने वाले मजदूर को दो दिन की छुट्टी करने पर कम्पनी से निकाल दिया जाता है और कोई हिसाब नहीं दिया जाता ।

—o—

गेडोर उर्फ झालानी टूल्स में मैनेजमेंट ने सैकेन्ड प्लांट में संगमरमर का मन्दिर बनवाया है पर मजदूरों के वर्षों से बकाया वेतन के लिए मैनेजमेंट के पास पैसे नहीं हैं । हां, 24 मार्च को मन्दिर के उदघाटन से पहले के कर्मकाण्डों ने मजदूरों का कुछ मनोरंजन अवश्य किया । यह पूंजी के नुमाइन्दों का अन्ध विश्वास ही था कि उन्होंने प्लांटों के अन्दर गेहूँ छिड़क कर बरबाद किया—तेल मिले कचरे की वजह से वह गेहूँ पक्षियों के खाने लायक भी नहीं रहा । साहब लोगों की भाषा में इसे प्युअर वेस्ट कहते हैं······और मन्दिर–पण्डों-यज्ञ की खिल्ली उड़ा कर मजदूर इस बात की तसदीक कर रहे थे कि यह सब वास्तव में मैनेजमेंट के लिए शुरु बरबादी थी ।

—X—

संपर्क—मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, बाटा चौक के पास, एन. आई. टी. फरीदाबाद 121001

मार्क्सवाद

(नौवीं किस्त)

पिछले अंकों में हम जिक्र कर चुके हैं कि जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की जब तक तंगी रहती है तब तक इन भौतिक जरूरतों की प्राप्ति की प्रक्रिया सामाजिक जीवन को अन्ततः प्रभावित करती है। और तंगी वाले सामाजिक संगठनों में गुणात्मक तौर पर भिन्न दो स्वरूप है—वर्ग विहीन समाज तथा वर्ग समाज। मानव समाज के प्रारम्भिक गठनों, जो कि वर्ग-विहीन सामाजिक संगठन थे, उनकी चर्चा द्वारा हमने दिखाने की कोशिश की कि उनमें रोटी और सुरक्षा के लिये जरूरी सामुहिक प्रयासों के कारण समाज का गठन आदिम साम्यवादी संगठन रहा तथा उनमें उल्लेखनीय परिवर्तनों की जड़ में रोटी-सुरक्षा हासिल करने के तरीकों में आये बदलाव थे। इस अंक से हम मानव समाज में आये बटवारे, वर्ग-समाज पर चर्चा आरम्भ करेंगे।

कन्द-मूल-फल-बटोरने तथा शिकार के दौर में आहार का मिलना बड़ा अनिश्चित रहता था। मानव-श्रम से अभी इतना पैदा नहीं होता था कि श्रम करने वाले के जीवन निर्वाह के खर्च के बाद कुछ बच भी रहे। इसलिए युद्ध में पराजित शत्रुओं को या तो मार डाला जाता था या विजेता उन्हें अपने बराबर वालों के रूप में स्वीकार कर लेते थे। लेकिन जब मानव दूध और मांस के लिए पशुओं को पालने लगे तब यह स्थिति बदल गई। पशुओं के रूप में मानव को एक ऐसी सम्पदा मिल गई थी जो लगातार बढ़ाई जा सकती थी। नदियों के किनारे हरे-भरे घास के मैदानों में पशुओं की साधारण देख-रेख से काम चल जाता था। इस प्रकार मानव-श्रम अपनी लागत से अधिक पैदा करने लगा और इसके साथ ही दूसरों के श्रम के शोषण की सम्भावना पैदा हुई। श्रम की उत्पादकता में तेज बढोतरी के लिये मानव समुदाय के वर्गों में बटने की आवश्यकता भी पेश आ गई। हम पूर्व में चर्चा कर चुके हैं कि सम्भावना व आवश्यकता का मतलब उनका वास्तविकता बन जाना नहीं होता। लेकिन यह सम्भावना व आवश्यकता बास्तविकता बनी और उससे समूचा मानव समाज प्रभावित हुआ।

पशु पालन के दौर में एक-दूसरे के पशु छीनने, हरे-भरे घास के मैदान छीनने के लिए अलग—अलग कबीलों में लड़ाइयां चलती थी। युद्ध में बन्दी बनाये लोगों को दास—दासी बनाया जाने लगा। मालिक कबीले स्वामीगण कहलाते थे। आरम्भ में दास बनाना युद्धबन्दियों तक सीमित था पर बाद में स्वय के कबीले के सदस्यों को भी गुलाम बनाया जाने लगा महाभारत के दौर की जुए और धोखाधड़ी की कहानियाँ तो बहुतो ने सुनी हैं।

शिकार के दौर में समाज में पुरुष और स्त्री की पोजीशन में आये परिवर्तन पशुपालन और उस पर आधारित स्वामी समाज व्यवस्था में बहुत महत्वपूर्ण बने। शिकारी पुरुष ही पालतू पशुओं का अधिकारी बने थे। पशु सम्पदा के बढ़ते प्रभाव के साथ समाज में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति कमजोर होती गई।

आरम्भ में अन्य वस्तुओं की ही तरह पशु सम्पदा पर भी सम्पूर्ण स्वामी गण का अधिकार होता था। स्वामियों का अपने समुदाय के अन्दर ही अपने दासों पर अधिकार होता था। इसलिए वे इस गण रूप से बन्धे होते थे तथा इसे बनाये रखने की कोशिश करते थे।

इस चर्चा को जारी रखते हुए अगले अंक में हम स्वामी समाज में हुए उल्लेखनीय परिवर्तनों की चर्चा करेंगे।

(जारी) —ओ

—0—

थॉमसन प्रेस में तालाबन्दी

21 मार्च को फैक्ट्री में झगड़ा करवा कर मैनेजमेन्ट ने प्रोडक्शन सस्पैन्ड के नाम से फैक्ट्री में लॉक आउट कर दिया है चार अप्रैल को समाचार मिलने तक तालाबन्दी जारी है पर **इस बार न बड़े-बड़े अखबार बड़ी-बड़ी खबरें दे रहे हैं, न पार्टियों के बड़े लीडर भाषण करने फैक्ट्री गेट पर आ रहे हैं, न मैनेजमेंटों की एसोशिएशन चूं चाँ कर रही हैं और न ही बिचौलिए शोर मचा रहे हैं।** दिसम्बर 90 में पूंजीवादी सरगनों, देवीलाल-चौटाला और थॉमसन-इन्डिया-टुडे-न्यूजट्रैक मैनेजमेंट के झगड़े के समय माहौल से इस बार हालात बिल्कुल भिन्न हैं। लक्षण बता रहे हैं कि इस बार मामला मजदूरों और मैनेजमेंट के बीच है। ऐसे में थॉमसन मजदूरों को फैक्ट्री गेट पर धरने के साथ—साथ अपनी ताकत बढ़ाने के लिए और भी कदम उठाने चाहिए नहीं तो समय के साथ मैनेजमेंट की ताकत बढ़ती जायेगी।

—x—

ठगी और भोलापन

हितकारी पोट्रीज में तालाबन्दी खत्म

मजदूरों के बढ़ते दबाव से निपटने के लिए 6 मार्च को मैनेजमेंट द्वारा की गई लॉकआउट 28 मार्च को एल एम एस को मान्यता देने के साथ ही खत्म हो गई है।

फरवरी का वेतन दिए बिना 6 मार्च को तालाबन्दी मजदूरों की हवा निकालने के लिए की गई थी। मजदूरों की एकता और जूझने के हौसले को बरकरार देख कर मैनेजमेंट ने अब मजदूरों के दबाव को टालने की चाल चली है। मैनेजमेंट को इस काम में उससे समझौता करने वालों ने मदद की है।

•

मैनेजमेंट एल एम एस समझौते के मुताबिक डिमान्ड नोटिस पर बात-चीत जून में होगी। मैनेजमेन्ट का मूल्यांकन यह है कि मई के चुनावों में चौटाला के साथ ही उसकी एल एम एस का हाल ऐसा हो जायेगा कि जून में न नौ मन तेल होगा न चुहिया नाचेगी। इसलिए जून की बात-चीत से होने वाले समझौते के अप्रैल से लागू होने की हवाई खीर परोसने वाले तो नहीं पर उसके स्वाद पर खुश हो रहे हितकारी के मजदूर अवश्य ही उल्लू बन रहे हैं।

लॉकआउट के दौर के लिए अस्सी परसैन्ट वेतन मिलने वाली झूठ की पोल दो दिन में ही खुल गई है ··· समझौता मजदूरों की सहमति से ही होगा की घोषणायें भी थोथी साबित हो गई हैं। फिर भी, हितकारी पोट्रीज के मजदूरों का एल एम एस को मैनेजमेन्ट द्वारा दी गई मान्यता को अपनी जीत मानना इन मजदूरों का भोलापन नहीं तो और क्या है।

किस बिचौलिये को मान्यता मिली है यह मजदूरों के लिए गौण बात है। लेकिन जगह-जगह देखने में यह आ रहा है कि मजदूरों की डिमान्डों की बजाय ऐसी मान्यता को मुख्य सवाल बना कर बिचौलिए मजदूरों को उल्लू बनाते हैं। अपनी डिमाण्डों पर अड़ कर ही मजदूर इस ठगी से पिन्ड छुड़ा सकते हैं।

अपनी आँखों पर बन्धी पट्टियों को फाड़ कर ही हितकारी पोट्रीज के मजदूर अपनी एकता तथा लड़ने का हौसला बरकरार रख सकेंगे और तभी अपने हितों के लिए संघर्ष जारी रख सकेंगे।

प्याली फैक्ट्री के मजदूरों को यह समझने की कोशिश करनी चाहिए कि फरीदाबाद में मजदूर एल एम एस को लूट मार संगठन क्यों कहते हैं ··

—o—

(प्रथम पेज से क्रमशः······)

इसलिए मजदूर जनतन्त्र को स्थापित करने की पहली शर्त ही यह रही है कि मजदूर हथियारबन्द हो कर पुलिस फौज भंग करें और डाइरेक्ट काम-काज चलायें। सब मजदूरों के हथियारबन्द होने और पुलिस फौज भंग की स्थिति में ही मजदूर खान-पान, रहन-सहन व काम का बराबर-बराबर बटवारा कर सकते हैं और बिना किसी से डरे या दबे अपने बिचार खुल कर सबके सामने रख सकपे हैं। 1871 में पेरिस कम्यून में और 1917 में सोवियत रूस में मजदूर जनतन्त्र का आरम्भ हुआ था पेरिस कम्यून को तो पूंजीवादी फौजों ने कुचल दिया था पर 1918 में मजदूर क्रान्ति के ही गर्भ से उपजी प्रतिक्रान्ति ने रूस में पूंजीवादी एकतन्त्र स्थापित किया और उस पर समाजवाद का, मजदूर राज का लेबल चिपका दिया इन 60-70 साल से पुलिस-फौज-नौकरशाही के उस क्रूर एकछत्र शासन को पूंजीवाद का, पूंजीवादी जनतन्त्र का बढ़िया विकल्प, क्रान्तिकारी विकल्प प्रचारित किया जा रहा था। हाल ही में रूस पूर्वी यूरोप-चीन के मजदूरों के असन्तोष ने इन इलाकों में जड़ जमाये बैठे पूंजीवादी एकतन्त्रों की नकाब ~~खोल~~ नोच ली है। इन इलाकों के मजदूरों द्वारा पूंजीवादी एकतन्त्र के मुकाबले पूंजीवादी जनतन्त्र की सतही बराबरी को बेहतर मानने का कारण स्पष्ट है—घोषित नाबराबरी से तो बराए नाम की बराबरी भी बेहतर है। पर पूंजीवादी प्रचार है कि पूंजीवादी एकतन्त्रों के खिलाफ इस बिस्फोट को पूंजीवादी जनतन्त्र की जीत प्रचारित कर रहा हैं······

चालीस साल से यहां पूंजीवादी जनतन्त्र को भुगत रहे मजदूरों की पूंजीवादी जनतन्त्र के ढोल-नगाड़ों के प्रति बेरुखी आज स्पष्ट है। यह चाय-कॉफी की चुस्कियों के साथ गर्मा-गर्म बहस करने वाले उदारवादियों-निम्न पूंजीवादियों को बड़बड़ाने की सामग्री प्रदान कर रही है, पर यह गौण बात है। महत्वपूर्ण बात, **खतरनाक बात यह है कि मजदूरों की उल्लेखनीय संख्या स्वयं को असहाय मान कर पूंजीवादी जनतन्त्र में दमन शोषण को झेलती रही है और आज मजदूरों का उल्लेखनीय हिस्सा हाथ पर हाथ धरे भुगतने को तैयार बैठा है।** [छूट गया]

स्वत्वाधिकारी व सम्पादक शेरसिंह द्वारा आटोपिन झुग्गी, फरीदाबाद से प्रकाशित व अलकनन्दा प्रिंटिंग प्रेस C-III/206, सं. गां. मेमो. न. से मुद्रित